International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232
Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 4; Issue 4; July 2018; Page No. 17-20

सूचना प्रौद्योगिकी के संदर्भ में सामकालीन कविता का उत्तर पाठ

महेष एस०
शोधार्थी, कोच्चिन विश्वविद्यालय, कोच्चिन, केरल, भारत।

सारांश
समकालीन समय सूचना प्रौद्योगिकी के विस्फोट का युग है। प्रतिपल परिवर्तित इस सैबर दुनिया में चौंधिया गयीं आँखों से सच्चाई को देख पाने में मनुष्य लगातार असमर्थ होते जा रहे हैं। पूरी परियोजना के तहत निर्मित छद्म सामाजिक यथार्थ मनुष्य को लगातार अपनी जडों से अलग करता जा रहा है। समकालीन भारत की इस यथार्थ को समकालीन हिन्दी कवि शिद्धत से पहचान रहे हैं। प्रस्तुत आलेख समकालीन कविता की इसी प्रसंगिकता को दर्शाने का एक प्रयास है।

मूल शब्द : सूचना प्रौद्योगिकी, समकालीन कविता।

प्रस्तावना

पृथ्वी पर मानव का आविर्भाव अनुमानतः पच्चीस लाख साल पहले हुआ था। पूरे विश्व के इतिहास में यह पच्चीस लाख साल अन्य जीव जन्तुओं को अपने नस्ल विकसित करने केलिए उपलब्ध सालों से बहुत कम रहा है। फिर भी इस कम समय-सीमा के तहत मानव दुनिया की आहार श्रेणी में सबसे ऊपर का स्थान ग्रहण कर सका है। मानव प्रजाति की त्वरित व वैविध्य पूर्ण विकास प्रणाली का इतिहास विश्व के इतिहास में सबसे बेजोड है। संज्ञात्मक क्रान्ति (Cognitive Revolution) से प्रातुर्भूत मानव संस्कृति कृषि क्रान्ति से गति पाकर औद्योगिक क्रान्ति से पल्लवित होकर अब सूचना क्रान्ति तक पहुंच चुकी है। "तीन महत्वपूर्ण क्रान्तियों ने मानव इतिहास को स्वरूप दिया है : 70,000 साल पहले संज्ञात्मक क्रान्ति ने इतिहास का श्री गणेश किया। 12000 साल पूर्व कृषि क्रान्ति उस में तीव्रता लायी। वैज्ञानिक क्रान्ति जो मात्र 500 साल पुराना है , अब पूरे इतिहस को बदलने में सक्षम है "[1] सूचना क्रान्ति तक आते - आते मानवीय संबन्ध ने जैविक उद्विकास की सारी प्रणालियों को एक प्रकार से बैपास ही कर दिया "जब से संज्ञात्मक क्रान्ति शुरु हुई तब से मानव अपनी चारित्रिक विशेषताओं को तीव्र गति से जैविक उत्परिवर्तन की सहायता के बिना आने वाली पीढी के लिए बदलने में सक्षम हुआ"[2] इस प्रकार मनुष्य ने अपने जैविक उत्परिवर्तन की सीमाओं को अपने मेधा के बल पर पार किया। पर अब यही मेधा बल भस्मासुर के समान मनुष्य की सहज जैविक स्थिति को तोड मरोड रहा है।

मानव प्रजाति की त्वरित व वैविध्य पूर्ण विकास प्रणाली के तहत हर स्तर पर संपन्न सामाजिक शक्ति तंत्रों की स्थिति की पहचान और उसकी सत्ता मीमांसा समकालीन मानवीय संबन्धों को समझने का एक उत्तर पाठ तैयार करती है। समकालीन समय नित नवीन संकीर्ण सामाजिक संबन्धों को रच रहा है। इस ज्ञान पर आधारित तकनीक मानवीय संबन्धों को शक्ति तन्त्र के नये- नये ज्ञान बिम्बों द्वारा लगातार परिभाषित करते जा रहा है। ज्ञान बिंबों की नवीन स्थिति मानवीय सामाजिक संबन्धों के जैविक आधार के सामने हर स्तर पर चुनौती खडी करती है। यह नवीन स्थिति दैनिक जीवन में छवियों के रूप में हमारी आँखों के सामने है जो लगातार हमारी जैविक संज्ञात्मक स्थिति को उलट-पलट रही है। विजय कुमार अपनी पुस्तक 'अंधेरे समय में विचार' में कहते है "20 वीं सदी तक आते–आते तो यह माना जाने लगा कि कोई भी समाज आधुनिक बनता है तो उसकी एक प्रमुख गतिविधि निरंतर नई-नई छवियों को निर्मित करना और उसका उपभोग करते रहना है। धीरे-धीरे वास्तविकता की ये गढ़ी गई छवियाँ ही वास्तविकता को निर्धारित करने लगती हैं। इन दी हुई छवियों के आधार पर हम वास्तविकता के बारे में अपनी अवधारणाएं बनाते हैं। ये छवियां वास्तविकता को लेकर हमारी ज़रूरतों का अनुकूलन और नियंत्रण करती हैं। हर आधुनिक समाज में ये छवियां इस संसार के बारे में हमारे प्रत्यक्ष अनुभवों को खारिज करती जाती हैं।"[3] मानव की उद्विकास प्रणाली के इतिहास में इस से पहले कभी भी उनकी सहज बुद्धि को चकरा देने में सक्षम कोई ज्ञान बिंब की निर्मिति नहीं हुई थी।

इस प्रकार मानवीय संबन्धों को प्रतिस्थापित करती सूचना ज्ञान, धन और हिंसा के त्रय द्वारा एक ऐसे ग्लोबल संस्कृति को जन्म दे रही है जिसके तहत हर मानवीय व्यवहार कृत्रिम बुद्धि द्वारा परिभाषित होगा।

आल्विन टाफ्लर के अनुसार इस नये शक्ति तंत्र के मूल में ज्ञान , धन और हिंसा काम करेंगे जो मूलभूत मानवीय संबन्धों के ढाँचे को तहस- नहस कर एक ऐसे ग्लोबल स्ट्रक्चर को रूपायित करेंगे जो मानवीयता से कोसों दूर होंगे । टाफ्लर की परिभाषा के अनुसार धन और हिंसा का नियामक तत्व ज्ञान ही है जो व्यावहारिक जीवन में सूचना कहलाएगी । सूचना के इस विशाल परिदृश्य को सामने रख कर डानियल गोलमान (Daniel Goleman) कहते हैं “The internet and e-mail have the same impact. A survey of 4830 people in the United States found that for many the internet has replaced television as the way free time gets used. The math: for every hour people spent using the internet, their face-to-face contact with friends, co-workers, and family fell by 24 minutes. As the internet survey leader Norman Nie, director of the Stanford institute for Quantitative study of Society put it[4] “you can’t get a hug or kiss over the internet” चाहे अमरिका में हो या भारत में सूचना प्रौद्योगिकी की स्थिति हर कहीं एक जैसी है । मानव के जैविक उद्विकास के इतिहास में इस से पहले कभी भी मानवीय संबन्धों को निर्धारित करने में जैविक स्थिति की सत्ता से परे किसी अन्य तत्व ने काम नहीं किया था । सूचना ने मानव की मूलभूत जैविक सत्ता स्थिति को ही पलट दिया । सूचना को इस विशाल परिदृश्य में समझे बगैर समकालीन कविता में उसका उत्तर-पाठ निर्धारण आसान नहीं होगा ।

समकालीन हिन्दी कविता पूरी शिद्दत के साथ समकालीन समय की इस अमानवीयता का प्रतिरोध कर रही है । राजेश जोशी के आनुसार “इस समय जो कविता लिख रहा है वह एक ऐसा कवि है जो दो शताब्दियों के बीच आवाजाही कर रहा है । उसके पास पिछली सदी में बने और टूटे स्वप्न और स्मृतियाँ भी हैं और इस सदी की नई वास्तविकता भी । आज के कवि को उद्योग और प्रौद्योगिकी जैसी दो अलग-अलग चरित्रों वाली विकट प्रणालियों और उसकी जटिल वास्तविकताओं के बीच आवाजाही करनी पड रही है । अन्तःकरण विहीन मुक्त बाज़ार और लोकतान्त्रिक स्पेस को दिनोंदिन कम करती प्रौद्योगिकी ने समाज की गति और संरचना को ही नहीं बदला है, हर रचना की प्राख्या और उपाख्या को भी बदल दिया है ।”[5]

इसी कारण समकालीन कवि के लिए समय की नब्ज़ पहचानना अनिवार्य हो जाता है । बाज़ार के बनाये भूल-भुलैये से बाहर निकलकर छद्म वास्तविकता की पोल खोलने का महान दायित्व उन्हीं के कन्धों पर है । राजेश जोशी के ही शब्दों में “ कविता सम्भवतः हमारे समय की वह आखिरी आवाज़ है जिसे बाज़ार और हिंसा अभी तक मलिन और गुमराह नहीं कर सकी है ।”[6] जहाँ सूचना अपने बृहत्तर परिदृश्य में ज्ञानात्मक प्रपंच (sensory illusion) के नये क्षितिजों को उद्घाटित करती जा रही है वहाँ कविकर्म पहले से अधिक जोखिम भरा भी हो जाता है ।

“चकाचौंध कर खींचते हुए नए चुम्बक
रोशन कर के झुलसा देने की कला
हर तरीके के पले पाले कलाकार
बुद्धि जीवियों और तालीमयाफ्ता नुमाइंदों की बढती कतार”[7]

पंकज राग के अनुसार भूमंडल की रात आँखों को चकाचौंध कर रही है । चारों तरफ रचे जा रहे महा प्रपंच से आँखों की सीमा लगातार सिकुडती जा रही है । आँखों देखी वास्तविकता की सच्चाई ज्ञानात्मक प्रपंच में घुल मिल रही है । जो कुछ हमें वास्तविक लगता है उसकी वास्तविकता की कोई गारंडी नही हैं । हर तरीके से पले पाले कलाकार अवास्तव को वास्तव कर के प्रस्तुत करने में माहिर है और हम अवास्तव को वास्तव समझने की आदी हो चुके हैं । सूचना की बाढ हमें भ्रमित करके चुम्बक के समान खींचकर झुलसा रही हैं ।

“यह रात एक घोषित रात है
यहाँ विश्लेषण नहीं ब्रेकिंग न्यूज़ है
दिन खबरों में मशगूल रहे
रंगों का सिलसिला विखंडित न हो
रंगों की प्रक्रिया पर शोध हो
रंग क्यों बने यह ज़ाहिराना माना जाए
काले सफेद के विवाद में पडकर रंगों को भूलना नादानी है
यह तुम्हारे देश की नीमरोज़ी धूप नहीं
यह भूमंडल की रात है ।”[8]

भूमंडलीय समय की सच्चाई मात्र ब्लैक एण्ड व्हाइट नहीं होती ,उसके पीछे के सारे रंग सूचना के महाप्रपंच के कारण हमारी आँखों से ओझल हैं, उसी का शोध अनिवार्य है । क्योंकि हमारी आँखों के सम्मुख दृश्यमान संसार के रंग विखंडित हैं, इसे आसानी से समझा नहीं जा सकता । सूचना के इस महाप्रपंच का आधार विशेष रूप से मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त प्रैमिंग है । इसीलिए प्रैमिंग को समझना अनिवार्य हो जाता है । प्रैमिंग हमारे मस्तिष्क की स्मरण शक्ति पर आधारित एक प्रकार की ज्ञानात्मक संवेदना है जिसके मुताबिक हम विकल्पों में से चुनाव करते हैं । विकल्पों में से चुनाव करने की दिमाग की इस स्मरण शक्ति पर आधारित प्रणाली को बाहरी उद्दीपन द्वारा वाँछित रूप में अनुकूलित किया जा सकता है । डानियल शाक्ट्र और एन्डॉल टाल्विंग के आनुसार “Effect of changing the ability to identify or produce a word or an object after a previous

exposure to the item".[9] इस प्रकार पंचेन्द्रियों द्वारा ग्रहित संवेदना अपने ज्ञानात्मक धरातल पर बाहरी उद्दीपनों द्वारा विशेष रूप से प्रभावित रहती है। अर्थात् समसामयिक जीवन में व्यक्ति जो कुछ देखता है, सुनता है, समझता है और चुनता है बाहरी सचेत प्रभाव (conscious influence) से निर्लिप्त नहीं हैं।

व्यक्ति की चुनने की प्रणाली ही भू-मण्डी का आधारभूत तत्व है और क्रय क्षमता ही व्यक्ति होने का मापदण्ड। व्यक्ति की क्रय क्षमता के सम्मुख प्रस्तुत विकल्पों की बाढ से चुनाव की प्रक्रिया स्थिर करना मण्डी की सबसे बडी चुनौत्तियों में से एक है। इसे स्थिर करने केलिए मण्डी सहारा लेती है सूचना प्रौद्योगिकी की। इस प्रकार ज्ञान और धन का सम्मिलित रूप हिंसा के महा स्वरूप को जन्म देता है। लीलाधर मंडलोई कहते हैं।

"बाज़ार हिंसा के स्थल है
यहाँ से शुरू होता है आपका वध
और आप को अपनी मृत्यु का बोध नहीं होता"[10]

इस बाज़ारू तंत्र के महा मंत्र में फँसकर हम मानवीय संबन्धों को चीज़ों से तौलना शुरू करते हैं। हमारी ज्ञानात्मक संवेदना इस कदर आच्छादित रहती है कि हमें वास्तविकता का बोध नहीं हो पाता। आज हम चारों तरफ से चीज़ों से घिरे हुए हैं। हाट-बाज़ार की शोर-गुल में मानवीय संबन्धों की ऊष्मा लगातार गिरावट दर्ज कर रही है। चीज़ों से आक्रान्त मानवीय संवेदना की चिराग गुल होता नज़र आ रहा है। निर्मला गर्ग पूछती है -

"क्या करते हैं हम
रिश्तों की जगह चीज़ों को रखते हैं
चीज़ें पहले तो घेर लेती हैं
फिर मौका पाकर अकेला कर देती हैं।"[11]

सहसंबन्ध ही सदियों से मानवीय सामाजिक संबन्धों का आधार रहा है जिस में व्यक्ति की अलग सत्ता तथा पसंद के चुनाव की अपेक्षा सामाजिक सहसम्मति को वरेण्यता प्राप्त थी। बाज़ार केलिए सामाजिक सहसम्मति निरुपयोगी चीज़ होने के कारण आयातित संस्कृति के बदौलत एक ऐसी संश्लिष्ट संस्कृति (composite culture) को रूपायित किया गया जो व्यक्ति की सत्ता को ब्रान्डट बनाकर पहचान देती है। नीलोत्पल कहते हैं

"निवेश हो रही है संस्कृति
गिरावट के बाज़ार में
बदले में क्या मिलता है ?
रुपये की मज़बूती
जूता पालिश की डिब्बी का विज्ञापन
बिकनी, गाउन, अंडरवियर
और शौकिया तौर पर
बिताया गया दिन समुद्र के बीच
नग्न, अर्द्धनग्न।"[12]

सूचना क्रान्ति के बदौलत मानव-मानव के बीच जहाँ भौतिक दूरी कम हुई है वहाँ आत्मीयता की दूरी बढती गयी। फेसबुक , ट्विट्टर और वॉट्सऑप छद्म मानवता का डेटा –बेस बन रहे हैं। पूरी व्यस्तता से हम अपने सामाजिक जीवन की नज़रिए को दूसरों की सम्मति हेतु प्रस्तुत कर आत्मतुष्टि पा रहे हैं। संजीव गुप्त कहते हैं

"वे इस दुनिया में है भी या नहीं
इस के बारे में बता सकेगा केवल
इंटरनेट में उनका ब्लाग,
फेसबुक पेज या ई-मेल एड्रस" [13]

साईबर दुनिया की छद्म पहचान (Pseudo Identity) को बनाये रखना आज अनिवार्य होता जा रहा है। लाइक और वयरल के चक्कर में आँखों के सामने तडपते इन्सान के साथ सेल्फियाँ खींची जा रही हैं। शिरोमणि महतो कहते हैं

"हाँ" , मीडिया तो घटनाओं को
' वाइरल' अथवा 'एक्सक्लूसीव' बना सकती हैं
मीडिया की ही मजाल है
जो आत्मदाह कर रहे आदमी को
अपने कैमरे में कैद कर सकती है "[14]

मानवीय संवेदनाओं को बिकाऊ बनाने की मीडिया की साजिश का पोल खोल कर शिरोमणि महतो हमारे सामने रख देते हैं। सूचना प्रौद्योगिकी

समकालीन सामाजिक यथार्थ को छद्म यथार्थ के परतों में इस कदर लपेट कर प्रस्तुत करती है कि यथार्थ का पता लगाना असंभव तो नही पर कठिन अवश्य हो जाता हैं । संक्षेप में कहा जा सकता है कि 'समकालीन समय' - रचनाकारों के सम्मुख उनकी रचना धर्मिता के अनुसार चुनौत्तियों का भवंडर उपस्थित करता है । जहाँ अमानवीयता चारों तरफ छद्म वेश धारण कर के मानवीयता के नाम पर बिके जाने के बाज़ारी तंत्र में मशगुल है वहाँ कवि कर्म चुनौती भरा क्यों न रहेगा !

संदर्भ

1. Yuval Noah Harari ,Sapiens A Brief History Of Humankind पृ.सं 33
2. Yuval Noah Harari ,Sapiens A Brief History Of Humankind पृ.सं 33
3. जन मीडिया 2017 अंक-69 पृ सं 16
4. DANIEL GOLEMAN SOCIAL INTELLIGENCE page 09
5. राजेश जोशी समकालीनता और साहित्य page 20
6. राजेश जोशी समकालीनता और साहित्य page 19
7. यह भूमंडल की रात है, पंकज राग, पृ.10
8. वही
9. SENSORY MARKETING ASPECTS, PETER LINTELLE' page 99
10. लिक्खे में दुख , लीलाधर मंडलोई पृ 83
11. कबाडी का तराज़ू ,निर्मला गर्ग , पृ .12
12. अनाज पकने का समय, नीलोत्पल
13. पासवर्ड , कथादेश फरवरी 2015,संजीव गुप्ता , पृ.51
14. मीडिया की मजाल, कथादेश फरवरी 2011,शिरोमणि महतो, पृ.51